विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या

❑ डा. एल. एन. मित्तल

राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर बहस के लिए जारी दस्तावेज 'विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा' पर विमर्श में एक परिचर्चा आयोजित की जा रही है । इस संदर्भ में हमें कुछ प्रतिक्रियाएं मिली हैं , जिनमें से एक यहां प्रकाशित है । परिचर्चा में गंभीर विश्लेषणपरक समीक्षात्मक प्रतिक्रियाओं को आगे भी प्रकाशित किया जायेगा। बहरहाल, इस टिप्पणी में कुछ जरुरी सवाल उठाये गये हैं ।

एन. सी. ई. आर. टी. ने विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा नाम से एक परिचर्चा दस्तावेज तैयार किया है । इस पर अलग-अलग पृष्ठभूमि के लोगों ने अलग-अलग तरीके से प्रतिक्रियाएं व्यक्त की हैं । कुछ इसे स्कूली पाठ्यक्रम का भगवाकरण मानते हैं । कुछ इसमें स्थानीयता, पारम्परिक ज्ञान और कौशल का अभाव देखते हैं । कुछ इसमें देशज ज्ञान और लोकविद्या की अनुपस्थिति देखते हैं । शिक्षा मंत्रालय (मानव संसाधन विकास मंत्रालय) की स्थायी समिति ने भी इस दस्तावेज की आलोचना की है । वामपंथी दलों और कांग्रेस ने राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन सरकार के अन्य कार्यकलापों आई.सी.एच.आर., आई. सी.एस. एस. आर. तथा एन.सी.ई. आर.टी. में चयन के लिए एक खास विशेषज्ञ को नामित करने के प्रसंगों के साथ इस परिचर्चा दस्तावेज की भी आलोचना की गई है ।

इस दस्तावेज को तैयार करने से पूर्व एन.सी.ई.आर.टी. ने छः स्थानों पर कार्यशालाएं करके इसकी रूपरेखा को तैयार किया था। जैसा कि आमतौर पर होता है, इन कार्यशालाओं में ज्यादातर प्रतिभागी अपने सैर सपाटे, संबंध प्रगाढ़ करने और अपना मोटा यात्रा भत्ता लेने में ही रुचि रखते हैं । फिर भी कलकत्ता कार्यशाला में वहां के शिक्षा मंत्री ने दस्तावेज के कुछ बिन्दुओं पर काफी आक्रमक रूख अपनाया हुआ था । इन सब प्रतिक्रियाओं को दस्तावेज में शामिल नहीं किया गया है ।

यदि इस बात को छोड़ भी दिया जाए कि इस दस्तावेज में बहुत से ऐसे शब्दों का प्रयोग किया गया है जो अपने अर्थों में स्पष्ट नहीं है तो भी इस दस्तावेज की प्रमाणिकता में शक है ।

जैसे कि प्रस्तावना का पहला वाक्य कहता है कि ''महात्मागाधी ने'हरिजन' में 1947 में अपने लेख में यह विचार व्यक्त किया था कि किसी भी देश की समस्त शिक्षा उस देश की उन्नति और विकास का प्रदर्शक और संवाहक है । जबकि वर्तमान किस्म की शिक्षा की मूल संकल्पना एकदम विरुद्ध है । गांधी जी ने नयी तालीम के बुनियादी ढांचे में कहा है कि स्कूलों में आजकल जो पढ़ाया जाता है उससे लोगों को नुकसान ही होता है। लड़के कुछ समय के लिए मदरसे जाते हैं, मगर वहां जाकर उन्हें असन्तोष रहता है । प्राथमिक शिक्षा का क्या स्वरूप हो, इसके संबंध में गांधी जी कहते हैं कि किसी उद्योग या दस्तकारी को बीच में रखकर उनके जरिये ही सारी शिक्षा दी जानी चाहिये । पर इसे कोई बहुधन्धी व्यावसायिक शिक्षा न मान ले । ऐसी गांधीजी की कभी मन्शा न थी ।

पाठ्यचर्या के सरोकार और मुद्दे वाले खण्ड में कहा गया है कि इक्कीसवीं शताब्दी में प्रवेश करते समय इस तथ्य को सर्वत्र स्वीकार किया जाता है कि पाठ्यचर्या मुक्त, सक्रिय लचीली और अन्तः सांस्कृतिक होनी चाहिये । इन शब्दों का क्या अर्थ है ? धुर दक्षिणपंथी से लेकर वामपंथी और स्वदेशी मान्यता वाले इनका जो चाहे वह अर्थ लगा सकते हैं ।

अब कुछ और तुक्के देखिये । इस दस्तावेज में कहा गया है कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नए पंचशील को अपनाए जाने की आवश्यकता है जो शिक्षार्थी केन्द्रित शिक्षा, महिला केन्द्रित परिवार, मानव केन्द्रित विकास, ज्ञान केन्द्रित समाज और नवाचार केन्द्रित भारत के उद्देश्यों की पूर्ति पर उपयुक्त बल दे । अब इन शब्दाडम्बरों का वास्तविक अर्थ क्या है ?

चिंताओं और मुद्दे वाले खण्ड में देशी ज्ञान का एकीकरण और मानवता को भारत की देन उपशीर्षक से ऐसे देशी पाठ्यक्रम की बात की गई है जो स्थानीय चिन्तकों गांधी, टैगोर, अरविन्द कृष्णमूर्ति आदि के विचार को प्रतिपादित करती हों । पर इसका प्रभाव इतने भर से आंका गया है कि क्यों बच्चे न्यूटन का नाम तो जानते हैं पर आर्यभट्ट का नाम नहीं जानते, कंप्यूटर के बारे में जानते हैं पर शून्य की अवधारणा के बारे में नहीं जानते । यह दस्तावेज योग, आयुर्वेद और यौगिक क्रियाओं के ज्ञान के अभाव को भी असन्तुलन मानता है ।

भाषा के प्रश्न पर दस्तावेज कक्षा एक और दो से अंग्रेजी भाषा को मुंह जबानी अनौपचारिक रूप से पढ़ाने की वकालत करता

है । दस्तावेज कहता है कि आज ग्रामीण क्षेत्रों में भी पहले दर्जे से अंग्रेजी सीखने की चाह बन गई है ताकि इसे सिखा कर कामयाबी हासिल की जा सके। दस्तावेज के अनुसार पहुंच, कामयाबी, समृद्धि, आदर, ऊंचा उठना ये शब्द अंग्रेजी को पहले दर्जे से पचाने के लिए उत्साहित करते हैं । अब यह सब बहुत खतरनाक निष्कर्ष है। अंग्रेज भारत छोड़ते समय कह गये थे कि अंग्रेज ही जा रहे हैं इस देश से अंग्रेजियत नहीं जा रही है । यह सब उसी का प्रत्यक्ष प्रमाण है अन्यथा भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से द्वितीय भाषा शिक्षण और अधिगम बहुत बाद में होना चाहिये क्योंकि बच्चे को अपने भाषा व्यवहार को परिवेश से सीखना होता है और यह परिवेश तत्काल समाज की परिस्थितियों से मिलता है । इसी स्थिति में प्रथम कक्षा से दूसरी भाषा पढ़ना और वह भी अंग्रेजी जिसका व्याकरणिक गठन परस्पर भारतीय (आर्य या द्रविड़) भाषाओं से नहीं मिलता, बच्चे की कोमल बुद्धि पर अनावश्यक बोझ डालना है ।

इस दस्तावेज में गांधी को बेहिसाब उदृत किया गया है । गांधी जी तो पाश्चात्य अवधारणाओं पर आधारित आधुनिक शिक्षा की इसलिए आलोचना करते थे क्योंकि उस शिक्षा का बच्चों के ऊपर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है । वे अंग्रेजी के माध्यम के रूप में प्रयोग के खिलाफ थे क्योंकि इसे वे बच्चे के विकास में अवरोध मानते थे । उनके अनुसार पाश्चात्य आधुनिक शिक्षा समता या समन्वय के स्थान पर आलसी, स्वकेन्द्रित, संस्कृतिविहीन व अरचनात्मक व्यक्ति बनाती है । गांधी जी शिक्षा को आर्थिक़ उन्नति से जोड़ने के सख्त खिलाफ थे । वे मानते थे, हो सकता है कि सच्ची शिक्षा व्यक्ति को आर्थिक़ रूप से स्वतंत्र कर दे, यह औपनिवेशिक शिक्षा तो नकली और अवांछित इच्छाओं को ही बढ़ाती है ।

यह दस्तावेज शिक्षा और साक्षरता में भेद करके नहीं देखता। गांधी जी तो मानते थे कि संभवत: निरक्षर व्यक्ति अपने जीवन से ज्यादा संतुष्ट है और शायद साक्षर व्यक्ति की तुलना में अधिक सुखी और संतोषी है । गांधी जी के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों के लिए तो यह शिक्षा भयंकर दुष्कर परिणाम सामने ला रही है । गांधी जी ने शिक्षा और विकास की वर्तमान अवधारणा पर भी प्रश्न चिन्ह लगाये हैं । उनके अनुसार यह कैसी शिक्षा है जो उन्हें अपनी संस्कृति और अपने समाज को पिछड़ा हुआ देखने की समझ देती है । गांधी जी ने शिक्षण प्रणाली और पाठ्य पुस्तकों की भी बात की है । उनके अनुसार अधिकांश में पाठय पुस्तकों की आवश्यकता नहीं है अपितु वे नुकसान ही पहुंचाती है । इन पाठ्यपुस्तकों में जो कुछ स्थानीय है उसका अभाव रहता है । गांधी जी मानते थे कि यह शिक्षा तो बच्चे को उसकी पारम्परिक संस्कृति से दूर ही करती है। गांधी जी तो पाठ्य पुस्तकों को पूरी तरह नकारते थे । ऐसे में इस दस्तावेज में जगह-जगह गांधी जी के उद्धरण देकर गांधी जी को न समझने की भूल की गई है ।

आज शिक्षा के क्षेत्र में दो विरोधी धुरियां हैं - एक ओर तो शिक्षा को जीविकोपार्जन से जोड़कर उसे शुद्ध उपयोगितावादी बना दिया गया है और दूसरी ओर शिक्षा की वह अवधारणा है जो उसे व्यक्तित्व विकास को शिक्षा का लक्ष्य मानती है । हालांकि इस बढ़ती बेरोजगारी ने शिक्षा के व्यावसायिक और उपयेगितावादी पक्ष को भी हल्का कर दिया है, शास्त्रीय अवधारणा पर आधारित शिक्षा तो कहीं दीखती ही नहीं। आज की शिक्षा न तो कोई नया हुनर सिखा रही है न ही नयी दक्षता बल्कि पारम्परिक ज्ञान को नकारने के कारण युवाओं में हीनभावना ही भर रही है ।

शिक्षा द्वारा व्यक्ति की उन क्षमताओं का विकास होना चाहिये जो उसे एक स्वस्थ और सुखी जीवन जीने में मदद कर सके । शिक्षा को ऐसे व्यक्ति का निर्माण करना है जिसे अपने समाज, परिवेश और देश की समझ हो और जो समस्याओं को सुलझाने के लिए आवश्यक विश्लेषण क्षमता, साहस और निर्णय लेने की समझ रखता हो । इन बिन्दुओं से आंकने पर तो यह परिचर्चा दस्तावेज खरा नहीं उतरता।

शिक्षा तो ऐसी प्रक्रिया है जिसका उपयोग पुरानी पीढ़ी उस पीढ़ी के लिए करती है जो सामाजिक जीवन के लिए अभी प्रस्तुत नहीं है । एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक परम्परा, संस्कृति, ज्ञान और कौशल को हस्तान्तरित करने में शिक्षा की अहं भूमिका होनी चाहिये। भारत में प्राचीन काल से ही शिक्षा की औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार की प्रणालियां प्रचलित थीं । प्राचीन काल में अनौपचारिक शिक्षा परिवार में होती थी और यह अनुभवों को पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित रखने का माध्यम थी। उपनिषदों में शिक्षा को आत्मसात् करने के तीन चरण बतलाये गये हैं - श्रवण, मनन और निदिध्यासन और औपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत भाषा, व्याकरण, धर्म, दर्शन, ज्योतिष की शिक्षा का प्रावधान था।

शिक्षा द्वारा व्यक्ति की उन क्षमताओं का विकास होना चाहिये जो उसे एक स्वस्थ और सुखी जीवन जीने में मदद कर सकें। शिक्षा को ऐसे व्यक्ति का निर्माण करना है जिसे अपने समाज, परिवेश और देश की समझ हो और जो समस्याओं को सुलझाने के लिए आवश्यक विश्लेषण क्षमता, साहस और निर्णय लेने की समझ रखता हो । इन बिन्दुओं से आंकने पर तो यह परिचर्चा दस्तावेज खरा नहीं उतरता । ◆